P: ISSN NO.: 2321-290X
E: ISSN NO.: 2349-980X
RNI : UPBIL/2013/55327
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
Vol-III* Issue-IX* May -2016

लोकतन्त्र में न्यायपालिका की भूमिका

एल0 सी0 अनुरागी
असि0 प्रोफेसर,
राजनीतिक विभाग,
वीरभूमि रा0स्ना0 महाविद्यालय,
महोबा

सारांश

गार्नर महोदय ने कहा है कि स्वतंत्र न्यायपालिका के बिना सभ्य समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। न्याय विलम्ब से न मिले, सही न्याय व सस्ता न्याय मिले, यह न्यायपालिका का प्रयास होना चाहिए। बम्बई हाईकोर्ट ने हिट एण्ड रन मामले में सलमान खान को तेरह वर्ष पहले सड़क हादसे के आरोप से बेगुनाह मानते हुए दिसम्बर 2015 के निर्णय में बरी कर दिया है। परन्तु निचली अदालत ने सलमान खान को गैर इरादतन हत्या जैसे गम्भीर अपराध में 5 मई, 2015 को पांच साल की जेल की सजा सुनाई थी। मुकदमा भले ही 13 साल खिंचा, पर न्यायालय ने न केवल जमानत की अवधि बढ़ा दी बल्कि सुनवाई पूरी होने तक जेल जाने पर रोक भी लगा दी। अब सवाल यह है कि निचली अदालत ने पांच साल की सजा सुनाई, बम्बई हाईकोर्ट ने सलमान को निर्दोष बताया, तो क्या न्यायपालिका को संसद या जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होना चाहिए। यदि प्राथमिक विद्यालय का अध्यापक 2+2 = 4 पढ़ाये और माध्यमिक विद्यालय का अध्यापक 2+2 = 5 बताये, तब जनता किसे सही माने, हाँलाकि सही उत्तर चार है, परन्तु कभी–कभी निचली अदालत का निर्णय, हाईकोट बदल देता है और हाईकोर्ट का निर्णय सुप्रीम कोर्ट बदल देता है, एक विचारणीय बात यह भी है कि सुप्रीम कोर्ट को तो अपना निर्णय भी बदलने का अधिकार है। ऐसे में गरीब नागरिक निचली अदालत से लेकर सुप्रीम कोर्ट तक की लड़ाई कैसे लड़ेगा? न्यायाधीशों का प्रयास होना चाहिए कि निचली अदालत का निर्णय ऐसा हो कि सुप्रीम कोर्ट तक उसकी गरिमा बनी रहे।

मुख्य शब्द : चोर–चोर, सिपाही, सच्चा न्याय, गवाह, मजिस्ट्रेट बंकिम बाबू, न्यायाधीश

प्रस्तावना

लोकतन्त्र में न्यायपालिका की भूमिका

बम्बई हाईकोर्ट ने हिट एन्ड रन मामले में सलमान खान को तेरह वर्ष पहले हुए सड़क हादसे के आरोप से बेगुनाह मानते हुए दिसम्बर 2015 के निर्णय में बरी कर दिया है। सलमान समर्थ सम्पन्न तबके से आते हैं। इस मामले में पुलिस का रोल भी अहम है। उससे पूछा जाना चाहिए था कि जब मामले में 60 गवाह थे तो उसने केवल 17 को ही अदालत में क्यों पेश किया? फिर उस कमाल को क्यों नही लाया गया, जो किसी भी वक्त उपलब्ध होने का हलफनामा दिये हुए था? ऐसे में न्यायाधीश का यह आँकलन गलत नहीं हो सकता कि अभियोजन पक्ष सलमान का गुनाह साबित नहीं कर सका। फिर नुरूल्लाह को किसने मारा? इसकी जाँच कौन करेगा? कोर्ट ने अपराध को संदेह से परे जाकर देखने का अपना फर्ज तो ठीक निभाया है। पर अभियोजन पक्ष को कमजोर करने वाले पहचाने गए तो नुरूल्लाह के असल गुनहगार पकड़े जाएंगे। यह जाँच होगी या नहीं, तय नहीं है। इसलिए सलमान अदालत से तो रिहा हो गए हैं पर सवालों से नहीं। इसी तरह संजीव नंदा और परेरा के मामले अभियोजन प्रक्रिया को कमजोर करते हुए निपटाये गए थे। उन्हे गुनाह के मुताबिक नाम मात्र की सजा मिली थी। तभी तो जिन तीन चार सबूतों के आधार पर सेशन कोर्ट ने सलमान को पांच साल की कैद दी थी, उन्हें हाईकोर्ट ने बेहद लचर माना। सलमान का गाड़ी चलाना और शराब पीना साबित नहीं हुआ। नुरूल्लाह की मौत कार से कुलचने पर हुई, रिपोर्ट से इसकी तसदीक नहीं हुई। कंस्टेबल रवीन्द्र पाटिल के बयान को भी अदालत ने विश्वसनीय नहीं माना है। ट्रायल कोर्ट में मुकदमें की सुनवाई के अंतिम चरण में सलमान के ड्राइवर अशोक सिंह ने कबूला था कि वारदात के समय सलमान नहीं, वह गाड़ी चला रहा था। यदि यह सच है तो क्या अब अशोक के खिलाफ मुकदमा चलेगा ? सलमान खान को गैर इरादतन हत्या जैसे गम्भीर अपराध में उन्हें निचली अदालत ने 5 मई, 2015 को पांच साल की जेल की सजा सुनाई थी। मुकदमा भले ही 13 साल खिंचा, पर न्यायालय ने न केवल जमानत की अवधि बढ़ा दी बल्कि सुनवाई पूरी होने तक जेल जाने पर रोक भी लगा दी। अब सवाल यह है कि निचली अदालत ने

पांच साल की सजा सुनाई, बम्बई हाई कोर्ट ने सलमान को निर्दोष बताया, तो क्या न्यायपालिका को संसद या जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होना चाहिए। यदि प्राथमिक विद्यालय का अध्यापक 2 + 2 = 4 पढ़ाये और माध्यमिक विद्यालय का अध्यापक 2 + 2 = 5 बताये, तब जनता किसे सही माने, हांलाकि सही उत्तर चार है, परन्तु न्यायाधीशों के निर्णय को जनता क्या माने। कभी कभी निचली अदालत का निर्णय, हाईकोर्ट बदल देता है और हाईकोर्ट का निर्णय सुप्रीम कोर्ट बदल देता है, एक सोचनीय बात यह भी है कि सुप्रीम कोर्ट को तो अपना निर्णय भी बदलने का अधिकार है। ऐसे में क्या भारत का गरीब मजदूर निचली अदालत से लेकर सुप्रीम कोर्ट के निर्णय तक की लड़ाई में निराश नहीं होगा। ऐसे में न्यायाधीशों को स्वयं गहन विचार विमर्श करना चाहिए और जनता या संसद के प्रति न्यायपालिका की जबावदेही तय करना चाहिए। अन्यथा गरीब व्यक्ति अदालती खर्च के बोझ से दब जायेगा और वह निर्णय की प्रतीक्षा में अपना जीवन ही बरबाद कर देगा।

न्यायपालिका में एक ओर न्याय पाने के लिए संघर्ष, तो दूसरी ओर स्वयं न्यायाधीश आपस में एक नहीं हैं। जस्टिस के रामास्वामी ने इंगले बनाम् कर्नाटक सरकार (1992) में इस बात पर दुःख जताया था कि उच्च जाति के जज उनके साथ उठते बैठते नहीं थे, पिछड़ी जातियों के जजों के साथ भोजन नहीं करते थे। मद्रास हाईकोर्ट के जज कर्नन भी हर मौके पर जातिगत भेदभाव बरते जाने की शिकायत कर रहे हैं। अहम प्रशासनिक पदों पर नियुक्त किए जाने से वंचित रखे जाने और सामाजिक अवसरों पर सहयोगियों द्वारा क्षुद्र व्यवहार किए जाने की शिकायत कर रहे हैं। उन अवरोधों की बात कह रहे हैं जो दूसरों को दिखलाई पड़ते हों, लेकिन वह हर दिन उन्हें भोग रहे हैं। मद्रास हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश ने इसी कोर्ट में जज कर्नन का प्रशासनिक अवरोधों को दूर करने की गरज से किया तबादला कोलकाता कर दिया इक्कीस न्यायाधीशों ने शिकायत की थी कि जज कर्नन के साथ तालमेल बिठाये रखना मुश्किल था। परन्तु स्थानांतरित न्यायाधीश कर्नन ने स्वतः संज्ञान लेते हुए अपने कथित न्यायिक अधिकार का इस्तेमाल करते हुए अपने तबादला आदेश पर अंतरिम स्थगनादेश जारी कर दिया। उनका आदेश ताभी निरस्त किया जा सका जब भारत के प्रधान न्यायाधीश ने तबादला आदेश के बाबत लिखित में ब्यान दिया कि यह सुप्रीम कोर्ट के 1993 के एक फैसले का उल्लंघन है। सुप्रीम कोर्ट ने मद्रास हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश से कहा कि जज कर्नन को कोई कार्य न दिया जाय। परन्तु जस्टिस कर्नन ने वर्ष 1993 में सुप्रीम कोर्ट के जज जस्टिस एस0 रत्नावेल पांडियान की अध्यक्षता वाली नौ सदस्यीय पीठ के फैसले का हवाला देते हुए कहा कि उनके स्थानांतरण संबंधी चीफ जस्टिस का प्रस्ताव इस फैसले के खिलाफ है। उन्होंने सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस से अनुरोध किया कि उनके कार्य अधिकार क्षेत्र में वह हस्तक्षेप न करें। देश के न्यायिक इतिहास का इस तरह का यह पहला मामला है कि जस्टिस कर्नन ने स्वयं अपने तबादले के आदेश पर रोक लगा दी।

सपा मुखिया मुलायम सिंह यादव की ओर से दिए गए गैंग रेप संबंधी बयान पर सिविल जज जूनियर डिवीजन कुलपहाड़ (महोबा) उ0प्र0 अंकित गोयल ने स्वतः संज्ञान लेते हुए अखबारों में छपी खबरों के आधार पर 5 अक्टूबर, 2015 को सपा मुखिया के खिलाफ तलबी आदेश जारी किया था। इससे गुस्साए युवजन सभा के जिलाध्यक्ष भागीरथ यादव ने मकान मालिक सुनील अग्रवाल को जज अंकित गोयल से मकान खाली कराने की धमकी दी थी। इसे अदालत की अवमानना मानते हुए भागीरथ यादव और मुलायम सिंह के खिलाफ भी 8 अक्टूबर 2015 को तलबी आदेश जारी कर दिया गया। सपा मुखिया मुलायम के अधिवक्ता राजकुमार सिह चौहान और रामअवतार सिंह यादव ने महोबा जनपद न्यायाधीश चैतन्य कुमार कुलश्रेष्ठ की अदालत में दोनों तलबी आदेशों के विरुद्ध 2 नवम्बर, 2015 को रिवीजन दाखिल किया था। जिला जज ने रिवीजन स्वीकारते हुए न्यायिक मजिस्ट्रेट कुलपहाड़ के दोनों तलबी आदेश निरस्त कर दिए और आदेश में कहा कि न्यायिक मजिस्ट्रेट ने अपने क्षेत्राधिकार से हटकर कार्य किया। इतना ही नहीं जिला जल ने पूरी कार्यवाही को अवैधानिक करार दिया।

कुलपहाड़ के जज अंकित गोयल ने केन्द्रीय मंत्री अरुण जेटली को राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग को लेकर आये सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर अपनी प्रतिक्रिया दी थी, इस प्रतिक्रिया के खिलाफ जज गोयल ने कोर्ट में तलब किया। तब केन्द्रीय मंत्री अरूण जेटली ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में शरण ली। तब न्यायाधीश यशवंत वर्मा ने जेटली के पक्ष में निर्णय देते हुए कहा कि किसी भी मजिस्ट्रेट को किसी भी मामले का स्वतः संज्ञान लेकर सुनवाई का हक नहीं है। इसी तरह मा0 मुलायम सिंह के मामले में हाईकोर्ट के जज सुनीत कमार ने मजिस्ट्रेट गोयल द्वारा जारी वारंट को अधिकारातीत बताते हुए रद्द कर दिया और मजिस्ट्रेट गोयल को संस्पेंड कर दिया। एक ओर न्यायिक मजिस्ट्रेट सस्पेंड हो रहे हैं, दूसरी ओर बंकिम चन्द्र चटर्जी जैसे मजिस्ट्रेट पीड़ित पक्ष की मदद करके विक्रमादित्य की तरह न्याय देने में सफल रहे। एक ग्रामीण ब्राह्मण का पुत्र कलकत्ता (कोलकाता) में पढ़ता था, कलकत्ता से खबर आई कि उसका पुत्र बीमार है। वह अपने पुत्र को देखने पैदल कलकत्ता के लिए चल पड़ा। मार्ग में रात हो जाने पर उसने एक गांव में ठहरने का निश्चिय किया परन्तु गांवों के लिए लोगों ने उसे ठहरने से मना किया। अन्त में एक व्यक्ति ने उसे अपने घर में ठहरने दिया। वह गरीब ब्राह्म्ण पुत्र की चिन्ता में रात भर करवटें बदलता रहा परन्तु मध्य रात्रि में उसे बाहर कुछ आहट सुनायी पड़ी, तब वह उठ बैठा। उसने बाहर निकलकर देखा कि एक व्यक्ति सन्दूक सिर पर उठाये भागा जा रहा है। उसे संदेह हुआ। वह चोर–चोर चिल्लता हुए उसके पीछे भागा और उसे पकड़ लिया। संदूक लेकर भागने वाला एक सिपाही था। सिपाही ने सन्दूक को रख दिया और चोर–चोर कहकर उल्टे ब्राह्मण को ही पकड़ लिया। गांव के बहुत से व्यक्ति इकट्ठे हो गये। उन्होंने जब देखा कि पुलिस का सिपाही एक अज्ञात व्यक्ति को पकड़े हुए है और सन्दूक पास में पड़ा है, तब उन्होंने उस ब्राह्मण को चोर समझा। उसे थाने में ले जाया गया और उसके विरुद्ध मुकदमा चलाया

गया। यह मुकदमा बंकिमचन्द्र चटर्जी के न्यायालय में चला। न्यायालय में दोनों के वक्तव्य सुनकर बंकिमचन्द्र चटर्जी यह तो ताड़ गये कि ब्राह्मण निर्दोष है और सत्य बोल रहा है, किन्तु निर्णय देने के लिए किसी बाहरी प्रमाण की आवश्यकता थी। अतः उन्होंने उस दिन की कार्यवाही स्थगित कर दी। दूसरे दिन न्यायालय में एक व्यक्ति ने आकर मजिस्ट्रेट बंकिमबाबू से कहा कि तीन कोस की दूरी पर एक हत्या हो गयी है, लाश वहां पड़ी है। बंकिमबाबू ने तुरन्त कटघरे में खड़े हुए पुलिस के सिपाही और ब्राह्मण को आदेश दिया कि तुम दोनों जाकर उस शव को अपने कंधों पर उठाकर ले आओ। दोनों शव को उठाने चले गए और जब शव ला रह थे, ब्राहण अपने पुत्र की बीमारी से पहले ही दुःखी था और एक नई मुसीबत में और फंस गया। तब हंसकर पुलिस वाला बोला – ''कहो पंडित जी! मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि मुझे चुपके से संदूक ले जाने दो, नही तो विपत्ति में पड़ोगे। तुम नहीं माने, अब फल भोगों अपनी करनी का, अब कम से कम तीन साल की जेल की हवा खानी पड़ेगी। न्यायालय की आज्ञा से शव न्यायालय में रखा गया और उसके बन्धन खोल दिए गए और अभियोग प्रारम्भ हुआ। जिस समय दोनों पक्षों के वक्तव्य हो चुके तो एक विचित्र घटना घटी। वह शव उन वस्त्रों को उतारकर खड़ा हो गया और उसने मार्ग में हुई पुलिस के सिपाही और ब्राह्मण की सभी बातों को बताया उसकी बातें सुनकर बंकिमचन्द्र ने ब्राह्मण को निरपराध घोषित किया और पुलिस के सिपाही को चोरी करने का अपराधी ठहराकर दण्ड दिया। बंकिम बाबू ने चोरी का पता लगाने के लिए स्वयं यह युक्ति निकाली थी और एक विश्वास पात्र व्यक्ति को मृत का अभिनय करने के लिए नियुक्त किया था। यदि सभी न्यायाधीश सच्चे हृदय से सत्य की खोज करने का प्रयत्न करें तो अधिकांश अभियोगों में सत्य का पता चल सकता है और सच्चा न्याय हो सकता है।

न्यायाधीश भगवान का रूप होते हैं। उन्हें पीड़ित पक्ष की मदद के लिए बंकिम चन्द्र जैसी बुद्धि का प्रयोग करना चाहिए। उन्हें ऐसा कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए जिससे जनता के मन में संदेह हो, न्यायपालिका के प्रति प्रश्न उठे ? न्यायालय का असाधारण शक्तियां ग्रहण करना खतरनाक है। कुछ लेखकों ने न्यायपालिका की शक्तियों के बारे में चिन्ता प्रकट की और अपने विचार दिए ''सामयिकी'' में 1990–2004 के दौरान राँची के प्रभात खबर में प्रकाशित अगम प्रकाश के लेखों का संग्रह है। विद्वान लेखकों ने कार्यपालिका और विधायिका के क्षेत्र म न्यायपालिका के हस्तक्षेप की ओर बड़े शक्तिशाली ढंग से ध्यान खींचा है। उनका मानना है कि न्यायपालिका ने पिछले कुछ वर्षों में असाधारण शक्तियां ग्रहण कर ली हैं ओर सभी क्षेत्रों में अपने अधिकार क्षेत्र का विस्तार कर लिया है, जो नागरिकों की आजादी और उनकी निर्वाचित संस्थाओं, संसद एवं विधान मंडल के लिए खतरा हो सकता है। उनकी राय में समान नागरिक संहिता के मामले में उच्च्तम न्यायालय का सरकार एवं संसद के कार्य पर टिप्पड़ी करना और निर्देश देना अनुचित था क्योंकि यह विषय विधायिका के अधिकार क्षेत्र में है। यह उन पिछड़ों में क्रीमीलेयर को आरक्षण का लाभ न देने और उच्च्तम न्यायालय द्वारा आरक्षण की सीमा 50 प्रतिशत करने के भी विरुद्ध है। वह न्यायाधीशों की नियुक्ति में न्यायाधीशों के एकाधिकार को भी अनुचित मानते हैं। उनके विचार से सीबीआई को सरकार के नियन्त्रण और मार्गदर्शन से मुक्त करके स्वायत्त संस्था बनाने से पुलिस राज और अंततः सैनिक शासन स्थापित होगा। विद्वान लेखक का यह भी मत है कि जनता को न्यायपालिका का किसी न्यायाधीश के विरुद्ध बोलने और सामूहिक रुप से विरोध प्रकट करने का अधिकार होना चाहिए। इसके अभाव में न्यायाधीश निरंकुश सत्ता के मालिक हो गए हैं और उन पर किसी स्तर पर जनता और जनप्रतिनिधि–संस्थाओं का नियंत्रण नहीं है। न्यायाधीशों को जन कल्याण हेतु स्वयं विचार विमर्श करना चाहिए।

न्यायपालिका की समस्याएं

देश का सर्वोच्च न्यायालय इन दिनों एक महत्वपूर्ण सवाल से जूझ रहा है कि आखिर लंबित मामलों के अंबार से कैसे निपटा जाए। अभी सुप्रीम कोर्ट में 30 जज हैं जबकि लंबित मामलों की संख्या 15 लाख के लगभग है, ऐसे में 100 और जजों की जरुरत है लेकिन जजों की संख्या बढ़ाने से परस्पर विरोधी या असंगत फैसले आएंगे। अभी मार्च 2016 में चेन्नई के एक वकील ने सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दर्ज कर देश में चार अपीलीय अदालतें गठित करने का आग्रह किया है, ताकि हाईकोर्ट के फैसलों को वहां चुनौती दी जा सके। न्यायालयों में हालत यह है कि छोटे–मोटे अपराधों के मामले में विचाराधीन कैदियों के सजा की अवधि से अधिक समय तक जेल में रहने के मामले भी सामने आए हैं। मुम्बई, चेन्नई और कोलकाता में नेशनल कोर्ट ऑफ अपील के गठन की गुहार संबंधी याचिका पर सुनवाई के दौरान मुख्य न्यायाधीश टी0 एस0 ठाकुर और न्यायमूर्ति यू यू ललित की पीठ ने कहा कि आखिरकार वह संविधान कोर्ट की तरह कैसे काम करें। उसका 98 फीसदी समय तो अन्य याचिकाओं को निपटाने में लग जाता है, सुप्रीम कोर्ट के पास मूल काम के लिए ही समय नहीं है, उन्हें जजों की नियुक्तियां करके इस समस्या को हल करना होगा।

लगभग तीन महीने पहले जजों के नियुक्ति वाली कोलेजियम सिस्टम की वापसी हो गई है, लेकिन अभी तक सुप्रीम कोर्ट व उच्च न्यायालयों में जजों के रिक्त पद भरने के लिए नए नामों की सिफारिश नहीं हुई है। कानूनी मंत्रालय के 1 जनवरी 2016 तक के आँकड़ों के अनुसार 24 उच्च न्यायालयों में जजों के स्वीकृत 1,044 पदों में से 443 रिक्त हैं। ये अदालतें सिर्फ 601 जजों के साथ काम कर रही हैं। इलाहाबाद हाईकोर्ट में सबसे अधिक 86 रिक्तियाँ हैं। इसके बाद मद्रास हाईकोर्ट में 38 पद खाली हैं। आठ हाईकोर्ट में तो फिलवक्त मुख्य न्यायाधीश ही नही है। यदि देश की अदालतों में न्यायाधीश ही नही होंगे, तो समय पर पीड़ित पक्ष को न्याय नहीं मिलेगा। इसके लिए न्यायपालिका को आवश्यक कदम उठाकर तत्काल न्यायाधीशों के पदों को भरना चाहिए। न्यायपालिका में जजों की नियुक्ति हेतु एक विशेष समिति बनना चाहिए जिसमें न्यायाधीशों के अलावा व्यवस्थापिका व वार काउन्सिल ऑफ इंडिया के सदस्यों की सहमति हो।

किसी भी देश की न्यायपालिका की सच्चे न्याय की कल्पना तभी की जा सकती है, जब न्यायाधीश सच्चाई व ईमानदारी से कार्य करें। यहां न्यायधीशों की ईमानदारी व कर्तव्य निष्ठा पर सवाल नहीं उठाया जा रहा परन्तु पूर्व के वर्षों में मीडिया में न्यायाधीशों की कार्यप्रणाली पर प्रश्न उठे हैं। दार्शनिक गार्नर का कथन है स्वतंत्र न्यायपालिका के बिना सभ्य समाज की कल्पना नहीं की जा सकती परन्तु न्याय में विलम्ब के कारण संविधान में प्रदत्त अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत स्वतन्त्रता पूर्वक जीवन व्यतीत करने के अधिकार का हनन हो रहा है। सर्वोच्च न्यायालय ने 2006 में आश्चर्य व्यक्त किया था कि वर्ष 1980 में बैंक के एक अधिकारी को भ्रष्टाचार विरोधी कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार किया था, परन्तु 26 वर्ष बीत जाने के बावजूद एक भी गवाह पेश नहीं किया गया था। एक अन्य केस में दिल्ली विश्वविद्यालय की 23 वर्षीय कानून की छात्रा प्रियदर्शनी मट्टू की हत्या 23 जनवरी 1996 को पुलिस अधिकारी के बेटे सन्तोष सिंह ने की थी। डी0एन0ए0 परीक्षण से पूर्णतः स्पष्ट था कि सन्तोष, प्रियदर्शनी मट्टू के बलात्कार और हत्या में लिप्त था। सन्तोष के रक्त नमूने प्रियदर्शनी मट्टू के कपड़ों पर मिले जेनेटिक मैटीरियल से मेल खाते हुए पाये गये। बलात्कार करने से पहले सन्तोष ने प्रियदर्शनी मट्टू पर हेल्मेट से प्रहार किया था। घटना स्थल से जो कांच के टुकड़े मिले, वह सन्तोष के हेल्मेट के टूटे बाइजर स मेल खाते पाये गये। सन्तोष ने प्रियदर्शनी के जिस्म पर चाकू से 19 बार वार किया था परन्तु सत्र न्यायाधीश जी0पी0 थरेजा ने 13 दिसम्बर 1999 को अपराधी सन्तोष को अपने फैसले में निर्दोष साबित किया। विद्वान न्यायाधीश जी0पी0 थरेजा ने अपनी टिप्पणी में कहा था, हालांकि मैं जानता हूं कि अपराध उसी ने किया है, लेकिन सन्देह के लाभ में, मैं उसे बरी करता हूं परन्तु दिल्ली उच्च न्यायालय के जस्टिस आर0एस0 सोढ़ी व पी0के0 भसीन की खण्डपीठ ने सन्तोष को भारतीय दण्ड संहित की धारा 302 और 376 के तहत दोषी करार दिया।

इस फैसल में ग्यारह वर्ष का समय लगा। गुजरात की एक निचली अदालत ने तो पूर्व राष्ट्रपति ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम के खिलाफ ही गैर जमानती वारण्ट जारी कर दिया था। वर्ष 2006 में पांच न्यायिक अधिकारियों का स्थानान्तरण हुआ परन्तु उन्होंने लखनऊ में सरकारी बंगलों से कब्जा नहीं छोड़ा। इस पर सुप्रीम कोर्ट की खण्ड पीठ के न्यायाधीश बी0एन0 अग्रवाल, पी0पी0 नावलेकर और एल0एस0पंटा ने नोटिस जारी करते हुए कहा था कि न्यायिक अधिकारी जो कुछ भी कर रहे हैं, वह उन्हें शोभा नहीं देता। ये नोटिस इलाहाबाद उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरलकी तरफ स अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश पी0के0 अग्निहोत्री, रामपुर के ए0डी0जे0 सन्तोष कुमार पाण्डेय, सीतापुर की ए0डी0जे0 नीना यादव, बदांयु के जिला न्यायाधीश पीयूष कुमार और महाराजगंज के अतिरिक्त दीवानी न्यायाधीश जगदीश प्रसाद को जारी किये गये थे। न्यायमूर्ति वीरा स्वामी जब 1991 में मद्रास उच्च न्यायालय के मुचय न्यायाधीश थे, तब उनके घर अनाप–सनाप धन बरामद हुआ था। सी0बी0आई0 उनके खिलाफ कार्यवाही करने ही जा रही थी कि सर्वोच्च न्यायालय ने उसे यह कहते हुए रोक दिया कि प्रधान न्यायाधीश की सहमति के बिना किसी न्यायाधीश के खिलाफ एफ0आई0आर0 तक दर्ज नहीं की जा सकती, आपराधिक जाँच की तो बात ही छोड़ दें। उच्च न्यायपालिका के न्यायधीशों को पद से हटाने की प्रक्रिया महाभियोग है। वर्ष 1993 में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश वी. रामास्वामी के खिलाफ महाभियोग की प्रक्रिया शुरु हुई थी, लेकिन तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने जानबूझकर महाभियोग को गिर जाने दिया। न्यायमूर्ति भरुचा ने एक बार कहा था कि बीस फीसदी न्यायाधीश भ्रष्ट हैं, पर इस हकीकत को स्वाकार करने के लिए न्यायपालिका तैयार नहीं है। 26 नवम्बर 2006 को राष्ट्रीय विधि दिवस के समारोह में सुपोम कोर्ट बार एसोसियेशन के अध्यक्ष एम0एन0कृष्ण मूर्ति ने न्यायपालिका में भ्रष्टाचार सम्बन्धी एक पूर्व मुख्य न्यायाधीश के वक्तव्य का उन्होंने न्यायपालिका में भ्रष्टाचार रोकने के लिए न्यायिक आयोग के गठन का सुझाव दिया था। सुप्रीम कोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायाधीश एम0एन0 बैंकटचलैया की अध्यक्षता वाले संविधान समीक्षा वाले आयोग ने भी न्यायाधीशों के आचरण की जांच के लिए समिति नियुक्त करने का सुझााव दिया था। समय रहते ब्रिटेन, कनाडा, जर्मनी व अमेरिका की तरह भारत में भी न्यायाधीशों को जबावदेह बनाने के लिए राष्ट्रीय न्यायिक परिषद् की आवश्यकता है। हमारे न्यायाधीशों ने ऐतिहासिक निर्णय भी दिए हैं वर्ष 2006 में त्वरित – न्यायिक इतिहास में बिहार के रोहतास के जिला न्यायाधीश अरुण श्रीवास्तव ने एक नाबालिग बच्ची के साथ दुष्कर्म की कोशिश के मामले की सुनवाई पांच घण्टे के अन्दर पूरी कर दोषी व्यक्ति को पांच साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाकर भारतीय न्यायिक इतिहास में एक कीर्तिमान स्थापित किया। इसी प्रकार विदेशी पर्यटक के साथ दुराचार के मामले में राजस्थान की एक अदालत ने वर्ष 2006 में मात्र चौदह दिन में फैसला सुनाकर इतिहास रच दिया। वर्ष 2006 में ही लखनऊ के बलरामपुर में महिला मरीज के साथ अस्पताल कर्मी द्वारा किये गये दुराचार के मामले को लखनऊ की फास्ट ट्रैक कोर्ट ने छत्तीस दिनों में फैसला सुनाकर लाखों पीड़ितों को त्वरित न्याय पाने की उम्मीद जगायी, इसे वर्तमान में अमल में लाये जाने की आवश्यकता है एवं आवश्यकता पड़ने पर न्यायाधीशों को मजिस्ट्रेट बंकिमचन्द्र चटर्जी जैसे पीड़ित पक्ष की मदद करके न्याय देने की आवश्यकता है। न्यायपालिका के सच्चे न्याय से लोकतन्त्र मजबूत होगा।

उद्देश्य

लोकतन्त्र में न्यायिक निर्णयों की गति बहुत धीमी है, न्यायालय में जजों के पद रिक्त हैं। इस शोध पत्र के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया गया है कि पीड़ित पक्ष को न्याय समय से मिले और न्याय प्रणाली सरल हो एवं सस्ती हो ताकि गरीब व्यक्ति को उच्चतम न्यायालय तक केस न लड़ना पड़े। न्याय पालिका, कार्यपालिका व व्यवस्थापिका अपने–अपने कार्य स्वतंत्रता पर्वक करे। माननीय न्यायाधीश, न्यायाधीशों के रिक्त पद भरने की प्रक्रिया व्यवहारिक बनाकर जनता को त्वरित न्याय दिलाने में लोकतंत्र की रीढ़ मजबूत करने में अपना सहयोग प्रदान करें।

उपसंहार

कार्यपालिका, व्यवस्थापिका व न्यायपालिका स्वतन्त्रतापूर्वक अपना–अपना कार्य जनहित में करे। न्यायपालिका के समक्ष ऐसे वाद न आ पाएं कि न्यायपालिका को कार्यपालिका व व्यवस्थापिका के कार्यों की जांच करना पड़े और अपना निर्णय सुनाना पड़े। तीनों के कार्यों में सामजस्य होना चाहिए। शोध पत्र में स्वतंत्र न्याय के लिए माननीय न्यायाधीशों को मजिस्ट्रेट बंकिम बाबू के तहत किसी जटिल वाद के निपटारे के लिए बल दिया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. राष्ट्रीय सहारा कानपुर 12 दिसम्बर 2016, पे0 8
2. अमर उजाला कानपुर 16 फरवरी 2016, पे. 18
3. अमर उजाला कानपुर 6 मार्च 2016, पे0 2
4. गीताप्रेस, गोरखपुर की कल्याण पत्रिका सितम्बर 2004ई, पे0 883–884
5. योजना जून 2007, पे0 56
6. अमर उजाला कानपुर 16 मार्च 2016, पे0 14
7. दैनिक जागरण कानपुर 19 जनवरी 2016, पे0 9
8. स्वतन्त्र भारत कानपुर 2 अगस्त 2006, पे0 6
9. दैनिक आज कानपुर 22 अक्टूबर 2006, पे0 8
10. जनसत्ता एक्सप्रेस 28 सिम्बर 2006, पे0 8
11. आज कानपुर 5 अक्टूबर 2006, प0 6
12. स्वतन्त्र भारत कानपुर 9 सितम्बर 2006, पे0 6
13. जनसत्ता एक्सपस (लखनऊ) 24 अक्टूबर 2006, पे08
14. आज कानपुर 14 सितम्बर 2006, पे0 6
15. स्वतन्त्र भारत कानपुर 20 अगस्त 2006, मुख्य पृष्ठसे
16. जनसत्ता एक्सप्रेस लखनऊ 31 अगस्त 2006
17. अमर उजाला कानपुर 24 अक्टूबर 2006, पे0 14
18. अमर उजाला कानपर 27 नवम्बर 2006, पे0 4
19. दैनिक जागरण कानपुर 24 नवम्बर 2006, पे0 6
20. स्वतन्त्र चेतना लखनऊ 25 नवम्बर 2006, पे0 6
21. आज कानपुर 11 नवम्बर 2006, मुख्य पृष्ठ